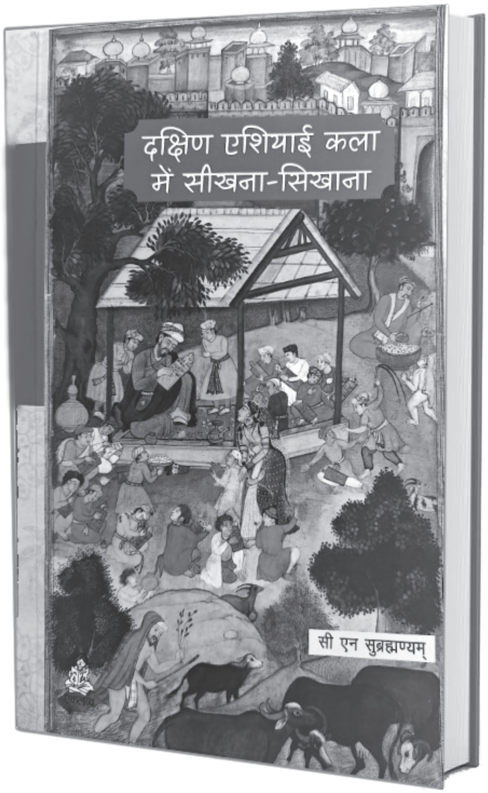
दक्षिण एशियाई कला में सीखना–सिखाना

अवधेश त्रिपाठी



दक्षिण एशियाई कला में सीखना-सिखाना

लेखक : सी एन सुब्रह्मण्यम्

प्रकाशक : एकलव्य प्रकाशन

सी एन सुब्रह्मण्यम् की किताब दक्षिण एशियाई कला में सीखना-सिखाना लोकप्रिय ढंग से इतिहास लेखन का एक बेहतरीन उदाहरण है। यह किताब जहाँ किशोरों के लिए अत्यन्त उपयोगी और रोचक पाठ है, वहीं शिक्षा व कला के इतिहास पर काम करने वाले लोगों के लिए ज़रूरी सन्दर्भ पुस्तक भी। सुब्रह्मण्यम् अपने पाठकों को मूर्तिकला और चित्रकला के उन प्राचीन व मध्यकालीन उदाहरणों की यात्रा पर ले जाते हैं, जिनमें शिक्षक और विद्यार्थी दर्ज हैं। यह यात्रा पाठकों के लिए बहुत रोचक है, और लेखक की ज़बरदस्त मेहनत की गवाही भी देती है।

यह किताब अब तक प्राप्त दुनिया के प्राचीनतम स्कूलों की चर्चा के साथ शुरू होती है। सुमेरियन सभ्यता के उत्खनन से प्राप्त इन स्कूलों में लिपिक तैयार किए जाते थे, जिन्हें गीली मिट्टी की पट्टियों पर पढ़ना-लिखना सिखाया जाता था। यह लगभग चार हज़ार साल पुरानी बात है। ज़ाहिर है, ये स्कूल समाज के सारे लोगों को शिक्षा देने के लिए नहीं बनाए गए थे। उस समय तक शिक्षा कुछ ही लोगों के लिए थी। बाक़ी लोग अपने बुज़ुर्गों के साथ काम करते हुए सीखते थे। यहाँ से शुरू करके सुब्रह्मण्यम् आधुनिक और सार्वभौम शिक्षा से जुड़ी छवियों तक की यात्रा करते हैं।

शिक्षा से जुड़े किसी भी व्यक्ति के लिए ‘पेडगॉजी’ (शिक्षण विधि) और ‘पेडगॉग’ (शिक्षक) रोज़मर्रा इस्तेमाल होने वाले शब्द हैं। शायद ही हम कभी ठहरकर सोचते हों कि कहाँ से चलकर ये शब्द हमारी ज़ुबान में दाख़िल हुए हैं, और इनका इतिहास क्या है? सुब्रह्मण्यम् चित्रों के माध्यम से पाँचवीं शताब्दी ईसा पूर्व में यूनानी भाषा में मौजूद इन शब्दों की जड़ों की ओर हमें ले जाते हैं। उस दौर में, अभिजात वर्गों के बच्चों के लिए ही स्कूल

होते थे। इन बच्चों को स्कूल ले जाने, वहाँ उनके सीखने के समय निगरानी करने, उन्हें वापस घर लाने, और इस तरह बच्चों के साथ सबसे ज़्यादा समय बिताने के लिए नियुक्त दास को यूनानी भाषा में 'पेडगॉग' कहा जाता था। बाद में यह शब्द शिक्षक के लिए इस्तेमाल होने लगा। दास के साथ सम्बन्धित यह शब्द शिक्षक के रुतबे को कम नहीं करता। दुनिया की लगभग सारी सभ्यताओं में शिक्षण एक ताक़तवर और सम्माननीय पेशा बनकर और शिक्षक ऐसे ज्ञान के मालिक के रूप में उभरता है, जिसके पास इहलोक और परलोक दोनों को सुधारने की शक्ति है।



गुरु और शिष्य, मथुरा संग्रहालय

सीखने-सिखाने से जुड़ी तमाम छवियों के बारे में यह किताब विस्तार से बात करती है। इन छवियों में शिक्षा के लिए बौद्ध और वैदिक परम्पराओं में 'अनुशासन' शब्द का प्रयोग लगभग शिक्षा के पर्याय के रूप में होता है। आज जब कक्षा में अनुशासन बनाए रखने पर बहुत ज़ोर दिया जाता है, यह किताब हमें बताती है कि अनुशासन का भी एक इतिहास रहा है– वह वांछनीय है या अवांछनीय, यह एकदम अलग बात है। इस किताब में शिक्षा से जुड़ी जिन छवियों की चर्चा की गई है, उनमें सबसे मज़ेदार है अजंता की गुफा नं. 2 में मौजूद एक चित्र। यह चित्र बच्चों के रखवाले देवी-देवता हारिति और पंचिक के आसन के नीचे खुदा है। छड़ी के साथ मौजूद गुरुजी की इस कक्षा के चित्र की व्याख्या करते हुए सुब्रह्मण्यम् लिखते हैं :

"पहले दो बच्चे तो तल्लीनता के साथ लिख रहे हैं, मगर तीसरा बच्चा कुछ 'बोर'-सा हो रहा है। वह अपनी तख़्ती को ढीला छोड़कर सामने की ओर देख रहा है। उसके पीछे एक चौथा बच्चा है जो उठ खड़ा हुआ है, और अपने एक और साथी के बुलावे पर वहाँ से खिसकने की मुद्रा में है। पटल के बाईं ओर दो बकरे आकर्षण का केन्द्र बने हुए हैं। दो बच्चे उनपर सवारी करने की कोशिश कर रहे हैं और तीन दूसरे बच्चे उन्हें उकसा रहे हैं। शायद वे अपनी बारी का भी इन्तज़ार कर रहे हैं। इसी मज़े में भाग लेने के लिए बच्चे कक्षा से धीरे-धीरे खिसक रहे हैं।"



अजंता की गुफा नं. 2 के शिल्प के आसन के हिस्से का डीटेल

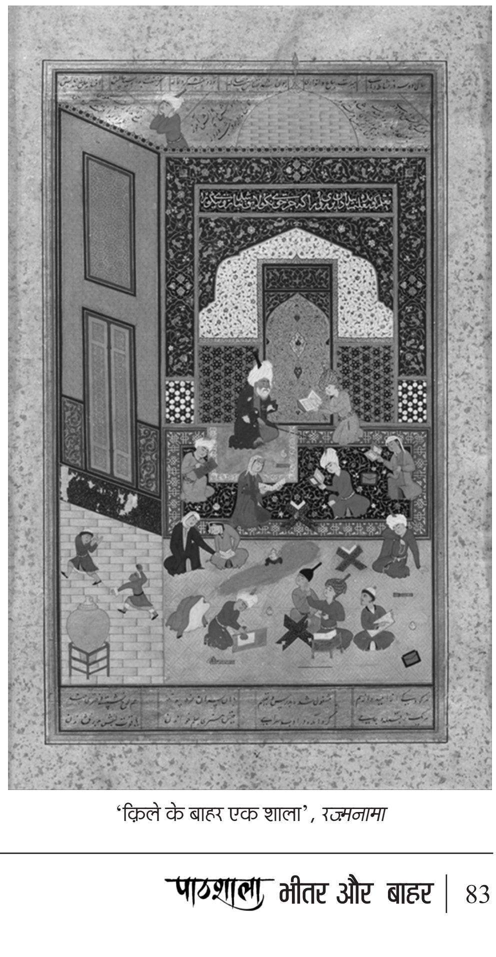


अजंता गुफा में शिक्षा प्राप्त करते सिद्धार्थ गौतम

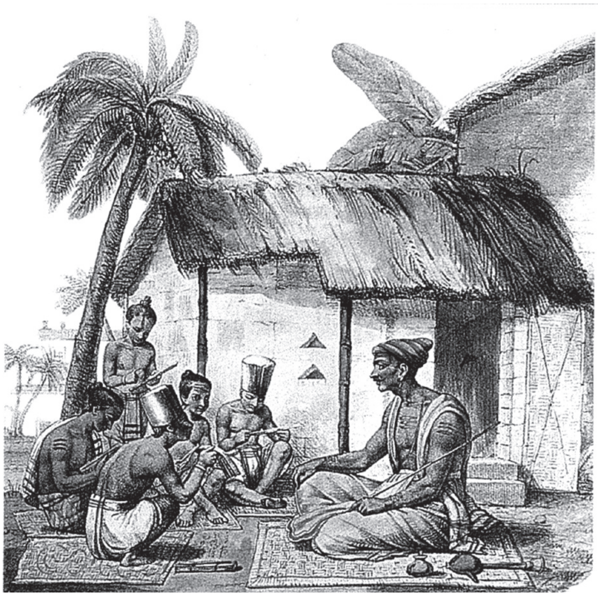
यह कक्षा में बच्चों की बोरियत और बाहरी दुनिया की मज़ेदार गतिविधियों को दर्ज करने वाला शायद पहला चित्र है। ''ज़ाहिर है, छड़ी और अनुशासन की बोरिंग दुनिया के बरअक्स बकरे की सवारी ज़्यादा मज़ेदार काम है। बकरा गिरा दे, सींग मार दे या भाग जाए, तब भी ख़ुद कुछ कर सकने और निगरानी से बाहर होने के सुख का कोई मुक़ाबला नहीं है।''

अगले अध्याय में लेखक ने पूर्व-आधुनिक भारत में छवियों के माध्यम से शिक्षा के बदलते स्वरूप की चर्चा की है। मुग़लकालीन चित्रों में शिक्षण गतिविधि जिन रूपों में दर्ज है, वह काफ़ी महत्त्वपूर्ण है। यहाँ तक आते-आते चित्रण की शैली के ज़रिए गुरु के केन्द्रीय स्थान और उसके महत्त्व को दर्शाया जाने लगा था। लेखक ने ऐसे चित्रों को दिखाया है, जिनमें शिक्षक एक क़िस्म का आध्यात्मिक रुतबा भी हासिल कर लेता है। वह गुरु, उस्ताद या पीर का दर्जा रखता है। भक्ति कविता में गुरु का जैसा माहात्म्य वर्णित है, उसकी झलक इस दौर के चित्रों में भी मिलती है। इन चित्रों के अंकन की तकनीक ऐसी है कि गुरु को चित्रों में अन्य की अपेक्षा काफ़ी बड़ा और केन्द्रीय रूप से दिखाया गया है।

इस किताब के आख़िरी अध्याय में आधुनिक दौर में शिक्षा के स्वरूप को दिखाया गया है। आधुनिक दौर में शिक्षा में जो सबसे बड़े बदलाव हुए, उनमें से एक था समाज के बड़े हिस्से को शिक्षा के दायरे में ले आना। और यह सम्भव हुआ यूरोप में औद्योगिक क्रान्ति के बाद। ज़ाहिर है, औपनिवेशिक शिक्षा व्यवस्था के आगमन के पहले भी भारत में एक शिक्षा की व्यवस्था मौजूद थी। इस अध्याय में, उत्तर भारतीय पाठशालाओं और मदरसों से लेकर दक्षिण भारत तक के स्कूलों का उल्लेख और विश्लेषण है।



'क़िले के बाहर एक शाला', *रज़्मनामा*



छात्र और गुरुजी (istock इमेज गैलरी)

शिक्षा के इन देशज संस्थानों में सबसे ज़्यादा ग़ौर करने वाली बात है, कक्षाओं में गुरुजी के पास छड़ी की उपस्थिति। शायद कक्षा में अनुशासन बनाए रखने का सशक्त माध्यम छड़ी ही थी। कुछ चित्रों में छड़ी छात्रों को दण्ड देने के लिए इस्तेमाल हो रही है, वहीं कुछ में उसका इस्तेमाल किसी चीज़ की ओर संकेत करने के लिए हो रहा है। कुछ चित्र ऐसे भी हैं, जिनमें छड़ी बस रखी-भर है। अजंता की गुफाओं के चित्रों से लेकर आधुनिक कक्षाओं तक छड़ी की यह उपस्थिति बहुत कुछ कहती है। यह अनायास नहीं है कि कुछ वर्ष पहले तक उन्हीं अध्यापकों को अच्छा माना जाता था, जो बच्चों को पीटते थे। यह एक तरह का शक्ति प्रदर्शन था, और बच्चों के मन में बैठा दिया जाता था कि शिक्षक के कहर से उसे कोई नहीं बचा सकता। माता-पिता तो चाहते ही थे कि बच्चों के भले के लिए अध्यापक उन्हें दण्डित करें।

तीन अध्यायों में विभाजित यह छोटी-सी पुस्तिका चित्रकला और शिल्पकला के ज़रिए शिक्षा और शिक्षण का रोचक इतिहास हमारे सामने पेश करती है। यदि आपकी रुचि इस विषय में कम भी है, तब भी बहुत सुन्दर गद्य पढ़ने के लिए इस किताब को पढ़ा जा सकता है।



अनुशासन और दण्ड

अवधेश त्रिपाठी अध्यापक, आलोचक और अनुवादक हैं। विद्यार्थी साहित्य के हैं, पर इतिहास में दिलचस्पी है। कई विश्वविद्यालयों में अध्यापन के बाद फ़िलहाल अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय की अनुवाद पहल के साथ जुड़े हैं।